Research Guru
Online Journal of Multidisciplinary Subjects (ISSN : 2349-266X)
UGC Approved Journal No. 63726
Impact Factor:3.021 website: www.researchguru.net
Volume-11,Issue-3,December-2017

ईसाई धर्म और अंग्रेजी संस्कृति

नीताबहन जे. जोशी
एसोसिएट प्रोफेसर
श्रीमती सी. आर. गार्डी आर्ट्स कॉलेज, मुनपुर

ईसाई धर्म के प्रथम प्रवतर्क ईसा मसीह (यीशु मसीह, क्राइस्ट) का जन्म ४ ई.पू. में हमारे एशिया महाद्वीप के फ़िलिस्तीन देश (यरुशलम के बेथलेहेम) में हुआ। वे प्रारंभ से ही दयालु और उदार थे। यहूदियों के धर्मगुरूओं और धनी लोगों के द्वारा जनता पर किये जाने वाले अत्याचारों से दुखी होकर उन्होंने आत्मिक प्रेरणा से अपने सद्धर्म का प्रचार किया, जो शीघ्र ही लोकप्रिय हुआ।

धीरे-धीरे उनके अनुयाइयों की संख्या बढती गई। इससे शासक लोग ईसा मसीह को शंका की द्रष्टि से देखने लगे। धर्माचार्यों ने उन्हें झूठा तथा जादूगर घोषित किया। ईसा मसीह दीन-दुखियों के बीच अपने धर्म का प्रचार करते रहे। अन्त में उनको गिरफ्तार करके रोमन के राजा के सामने लाये गए। उसने यहूदी पुरोहितों के कहने पर उन्हें मृत्युदण्ड दिया गया। ३०,३६ ई.पू. में सूली पर लटका कर उनकी इहलोक लीला समाप्त कर दी गई, पर उनका धर्म अमर हो गया।

ईसा एशिया में पैदा हुए और पनपे। एशिया वह भूमि है, जो प्राचीन काल से ही हिन्दू, बौद्ध और जैन धर्मो और दर्शनों की रंगस्थली रही है। एशिया के प्रत्येक भाग में इन भारतीय धर्मो की सुगन्ध बिखर चुकी थी और ईसा के जीवनकाल में वह सुगन्ध समाप्त नहीं थी। अतः ईसा की विचारधारा में भारतीय का संस्कार थे।

शिक्षाएँ

ईसाई धर्म की प्रथम शिक्षा है कि सभी मनुष्य समान है। मनुष्य को मनुष्य से घृणा नहीं करनी चाहिए तथा परस्पर सहायता करनी चाहिए। दया, प्रेम और सहनशीलता ईसाई धर्म के प्रमुख सिद्धांत है। मानव सेवा को ईसा ने सबसे बड़ा धर्म बतलाया है।

ईसा ने आचरण की पवित्रता और अहिंसा पर अधिक जोर दिया है। व्यक्ति जिन सिधान्तो में

विश्वास करता है, उसे उनके अनुसार चलना चाहिए। ईसा ने शत्रुओं से भी प्रेम करने का उपदेश दिया। उन्होंने स्वयं अपने को सूली पर चढ़ाने वालों को क्षमा करने के लिए ईश्वर से प्रार्थना की थी। उनका कहना था कि जो तुम्हारे गाल पर एक चाँटा मारे, उसके सामने दूसरा गाल भी कर दो। जो तुम्हें गाली देते हैं, उन्हें भी मीठे वचन से उत्तर दो और जो तुमसे घृणा करते हैं, उनकी भी भलाई करो।

ईसा ने धन का संग्रह न करने की सीख दी है। उन्होंने कहा कि मनुष्य को अपने धन से गरीबों की सहायता करनी चाहिए। तभी वह स्वर्ग में स्थान पा सकेगा। इसके अलावा धनी व्यक्ति कभी स्वर्ग नहीं पा सकता। ईसा के अनुसार दीन-दुखी धन्य हैं, क्योंकि ईश्वर का साम्राज्य उन्हीं के बीच है।

आगे चलकर, इस धर्म में ईसा के उपदेशों के अतिरिक्त कुछ नईं मान्यताएँ स्वीकृत हुई। इसके अनुसार ईश्वर के तीन रुप हैं - पिता, पुत्र और पवित्रात्मा। ईसा ईश्वर के पुत्र हैं। ईसा मनुष्य भी है और ईश्वर भी। ईसा के फिर से पृथ्वी पर आने की भी कल्पना की गई। जब ईसा पुन: पृथ्वी पर अवतरित होंगे, तब मृत प्राणी कब्र से बाहर आकर उठ खड़े होंगे, पुण्यात्माओं की मुक्ति होगी तथा सदा के लिए स्वर्ग में जायेंगे। ईसाइयों की धारणा है कि मनुष्य को ईश्वर के समीप पहुँचाने के लिए ईश्वर ने ईसा के रूप में अवतार लिया तथा इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए संघ (चर्च) का निर्माण किया।

भारत में ईसाई धर्म

ईसा मसीह के १२ शिष्यों में से संत तामस धर्मदूत के रूप में अपने प्रचारकों के साथ सन ३० इस्वी के आसपास भारत में आये थे। उन्होंने मालाबार और मद्रास में ईसाई धर्म का प्रचार किया था। उनके बनाये हुए सीरियाई ईसाइयों की पीढ़ियाँ उन्नीस सौ वर्षो से आज भी दक्षिण भारत में चल रही हैं। इस देश में सबसे पहले आने वाले ईसाई प्रचारक यूरोप से नहीं, एशिया के ही थे। यूरोप से आने वाली मिशनरियों द्वारा ईसाई धर्म का प्रचार सोलहवीं शताब्दी से आरंभ हुआ। इस प्रसंग में संत फ्रांसिस जेवियर का नाम उल्लेखनीय है। आरंभ में रोमन कैथोलिक चर्च का कार्य और प्रभाव व्यापक था। गोवा, दमन और दीव में पुर्तगाली शासन स्थापित हो जाने पर वहाँ पादरियों ने जोर-शोर से धर्म परिवर्तन का काम किया। डच और फ्रंसिसी लोगों ने भी भारतीय प्रदेशों पर अधिकार करने के साथ-साथ ईसाई धर्म का प्रचार किया। अंग्रेजों ने शुरु-शुरु में तटस्थता की नीति अपनायी। ईस्ट ईण्डिया कम्पनी ने अपने क्षेत्र में ईसाई मिशनरियों को प्रचार करने की रोक लगा दी, क्योंकि उसे भय था कि कहीं भारत वासियों में उनके विरुद्ध उत्तेजना न हो जाये। फिर भी एग्लिकन प्रोटोस्टेंट चर्च के मिशनरी भारत के दूसरे भागों में अपना कार्य करते रहे। सन १८१३ ई० में यह प्रतिबन्ध हटा दिया गया और कुछ ही वर्षो के भीतर इंग्लैंड, जर्मनी और अमेरिका के अनेक ईसाई मिशन भारत में स्थापित हो गए। उन्नीसवीं शताब्दी में ईसाई मत बहुत तेजी से फैला। उस शताब्दी के अंत तक ईसाईयों की संख्या ३० लाख हो गई। १६२१ की जनगणना के अनुसार भारत में ४७ लाख ईसाई थे। आज इनकी संख्या १ करोड़ ४२ लाख हैं। इनमें से ६० प्रतिशत तो दक्षिण के केरल, तमिलनाडु और आंध्रप्रदेश में रहते हैं शेष ४० प्रतिशत देश के अन्य प्रदेशों में हैं। नागालैंड में ६७ प्रतिशत और मेघालय की आबादी के लगभग आधे लोग ईसाई हैं। साठ वर्ष में ईसाईयों की जनसंख्या तिगुनी हुई हैं, जबकि भारत

की कुल आबादी साढ़े तीन गुना बढ़ी हैं। इसका अर्थ है कि कुल आबादी के अनुपात में ईसाईयों की संख्या कम ही हुई है। यह सच है कि थोड़ी बहुत संख्या धर्म-परिवर्तन से अवश्य बढ़ी है, किन्तु उतनी नहीं जितनी भीतर से। इस युग में पढ़े-लिखें लोगों का प्राय: धर्म के प्रति उपेक्षा का भाव रहा है। आधुनिक युग का युवक किसी धर्म का नियंत्रण नहीं मानना चाहता। आज का सामान्य युवक न पूरी तरह हिन्दू है, न पूरी तरह मुसलमान, न सच्चे अर्थो में सिक्ख है न ईसाई, वह धर्मनिरपेक्ष है। धर्म को वह बंधन मानता है, एक होना समझता है। उसके लिए जब धर्म का कोई विशेष महत्त्व ही नहीं है तो धर्म-परिवर्तन क्यों करे? ईसाई धर्म के प्रचार की गति रुक जाने के अन्य कारण भी हैं जिनका उल्लेख आगे चलकर किया जायेगा।

धर्म-प्रचार-विधि

ईसाई धर्म के प्रचार का कार्य जो मिशन करते रहे हैं, उन्होंने निम्नलिखित साधनों को अपनाया -

१) नगरों और क्षेत्रों के केंद्रों में बड़े-बड़े शानदार गिरजाघर बनवाये गए जिनका वातावरण भव्य और शांत होता है। वहाँ पूजा करने या बैठकर उपदेश सुनने की बढ़िया व्यवस्था है। प्रायः पादरियों का अनुशासन उच्चकोटि का रहा है।

२) आम तौर पर इन गिरजाघरों के साथ मिशन स्कूल और कॉलेज खोले गये जिनमें विशेषत: अंग्रेजी की पढ़ाई का स्तर ऊँचा रहा है। अंग्रेजी सिखने के उद्देश्य से भारतीय युवक भारी संख्या में इन संख्याओं की ओर आकर्षित होते हैं। ऐसे युवक अंग्रेजी शिक्षा के साथ अंग्रेजी रहन-सहन, पश्चिमी ज्ञान और मान्यताओं के पोषक और यूरोपीय सभ्यता के प्रचारक हो जाते हैं। इन संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा आवश्यक होती है। कान्वेंट स्कूलों के प्रति उच्चवर्ग और उच्च-मध्यम वर्ग का विशेष आकर्षण रहा है, क्योंकि वे अधिक समृद्ध हैं। इन स्कूलों में पढ़ने वाली लड़कियों को समाज में या नौकरी में अच्छा स्थान मिलता है। इन सभी तरह की स्कूलों में बाइबल की पढ़ाई भी होती है।

३) व्यावसायिक प्रशिक्षण की संस्थाओं का हमारे देश में अभाव-सा था, क्योंकि ऐसी संस्थाओं की स्थापना के लिए बहुत अधिक धन की आवश्यकता होती है। भारत में विदेशों से अनेक मिशनों को भरपूर धन मिलता है जिससे उनके लिए इस प्रकार के स्कूल खोलना आसन है। उनमें शिक्षित बहुत से युवक अनेक वर्षो तक ईसाई प्रचारकों से प्रभावित हो जाते हैं। उनको अपना व्यवसाय स्थापित करने के लिए पैसे भी मिल जाते हैं। ईसाई मिशनों की सहायता से सैकड़ो-हजारों नवयुवक अपने काम-धंधे में स्वावलंबी हो गए हैं।

४) स्थान-स्थान पर अनाथालय खोले गये हैं, जिनमें किसी भी जाति के दीन- हीन, लूले-लंगड़े, बेघर बच्चों को लेकर पालन पोषण किया जाता है और शिक्षा देकर उन्हें रोजगार योग्य बनाया जाता है।

५) परोपकार और सेवाफल से प्रेरित मिशनों ने जगह-जगह पर अस्पताल बनाये हैं, जिनमें रोगियों की चिकित्सा करते हुए उनमें ईसाईयों के प्रति सद्भाव और आकर्षण पैदा किया जाता है।

६) अपने गिरजाधरों, मेलों और सार्वजानिक स्थानों पर सभी लोगो को प्रेमपूर्वक आमंत्रित किया जाता है और उपदेशों द्वारा उन्हें ईसाई धर्म में लाया जाता है। ईसाई होते ही उनका सामाजिक स्तर ऊँचा हो जाता है, उनको धन मिलता है, और जिन्हें लोग अछूत मानते थे अब उनके साथ अछूतों का जैसा व्यव्हार नहीं

होता। पहले तो भारतीय ईसाईयों को सरकारी नौकरी मिलने और विदेशो में शिक्षा पाने में आसानी हो सकती थी। इस प्रलोभन से आगे बढ़ने के लिए उत्सुक कुछ लोग ईसाई धर्म अपना लेते थे।

अंग्रेजों के संपर्क में आने पर कुछ भारतीय विद्वानों और समाज के उच्च कोटि के नागरिकों की यह हृदय से धारणा हो गई थी कि विदेशियों के साथ घुल-मिलकर हम अपना साहित्यिक, सामाजिक और राजनीतिक सुधार कर सकते हैं। राजाराम मोहन राय इसी मत के थे। उसी समय से अंग्रेजों की रहन-सहन खान-पान, साजो-सामान को अपनाने वाले नागरिकों की कमी न रही। शासकों की संस्कृति का उन पर प्रभाव पड़ना स्वाभाविक था।

यह सच है कि स्वतंत्रता से पहले ईसाई धर्म और अंग्रेजीयत पश्चिमी सभ्यता के समानार्थक थे, अर्थात् ईसाई धर्म के प्रचार का अर्थ यह भी था कि भारत में पश्चिमी संस्कृति का बोलबाला हो। ईसाई होने के साथ ही प्रायः पुरुषों और स्त्रियों का पहनावा, उनका खान-पान, रहन-सहन, उनकी भाषा बदल कर अंग्रेज के ढंग की हो जाती थी। परंतु स्वतंत्रता के बाद ईसाई अपनी भारतीय संस्कृति की ओर उन्मुख हुए हैं। अब तो वे नाम भी हिंदुओं जैसे रखने लगे हैं और वे भारतीयता की ओर मुख्यधारा से जुड़ रहे हैं।

हिंदू धर्म पर प्रभाव

ईसाई धर्म भी इस्लाम की भांति सीधा-सादा धर्म है। जहाँ हिन्दू धर्म में यज्ञ, पुराण-कथा, व्रत-उपवास, तीर्थयात्रा, पूजा-पाठ आदि की अधिकता है, तो अन्य धर्मों में थोड़े समय में ईश्वर या अन्य के प्रति चर्च में पार्थना कर लेना काफी है। ईसाई धर्म की सादगी के प्रभाव को देखकर आवश्यकता प्रतीत हुई कि प्रगतिशील समाज के लिए ऐसा धर्म विकसित किया जाए, जिसकी जड़ तो प्राचीन धार्मिक ग्रंथो में हो लेकिन बाहरी रुप वैज्ञानिक प्रवृतियों से मेल रखता हो, साथ ही युग की आवश्यकताओं के भी अनुरुप हो। इसी उद्देश्य से राजा राममोहन राय का ब्रह्मसमाज, दयानंद सरस्वती का आर्यसमाज और स्वामी विवेकानंद का रामकृष्ण मिशन आदि प्रचलित हुए। इन सम्प्रदायों में वे सारी अच्छाईयो विशेष रूप से विकसित हुई, जो ईसाई धर्म में भारतीय युवकों को रुचिकर प्रतीत होती थी तो साथ ही प्राचीन हिन्दू धर्म की उन प्रवृतियों का नाम तक नही था, जिनकी कटु आलोचना ईसाई धर्म-प्रचारक करते थे। ईसाई धर्म की प्रचार- पद्धति को भी हिन्दू धर्म के सुधारकों ने अपनाया। सुधि का जो आन्दोलन चला, वह भी ईसाईयों के धर्म-परिवर्तन की प्रतिक्रिया में उठा। हजारों लोगों को फिर से हिन्दू धर्म के अंदर वापस लाया गया।

समाज पर प्रभाव

ईसाई धर्म शासन सत्ता के साथ गठबंधन करके भारत में आया था। इस्लामी संस्कृति से प्रभावित भारतीय समाज को उस समय ईसाई धर्म और अंग्रेजी संस्कृति के मुकाबले में खड़ा होना पड़ा तथा भारतीय संस्कृति को एक दूसरी बड़ी संस्कृति का सामना करना पड़ा, जो एक वैज्ञानिक संस्कृति है। विज्ञान अध्यात्मवाद को नहीं मानता और यही अध्यात्म भारतीय संस्कृति का स्तम्भ है। इस प्रकार भारतीय संस्कृति का नीचे लिखी तीन विरोधी शक्तियों से एक साथ ही संघर्ष हुआ ---

१. अंग्रेजी शासन, भाषा और संस्कृति

२. ईसाई धर्म और

३. विज्ञान

अंग्रेजी शासन चाहता था कि अंग्रेजी भाषा को सीखकर भारत अंग्रेजी संस्कृति के रंग में रंग जाए। अंग्रेजों को इसमें केवल आंशिक सफलता मिली। वे भारत में जितनी अंग्रेजी चाहते थे, उससे अधिक अंग्रेजी भारतवासियों ने सीखी और भले ही अंग्रेजी के अधिकांश भारतीय विद्वानों ने अंग्रेजी संस्कृति अपनाई, पर अंग्रेजी के ऐसे भारतीय विद्वानों की संख्या बढ़ चली, जो अंग्रेजी अनुसन्धान-पद्धति से ही अंग्रेजी संस्कृति, चाल-ढाल, रीति-नीति आदि में दोष देखने लगे।

-जिस प्रकार मुसलमानी शासन के साथ फारसी भाषा और संस्कृति का प्रसार हुआ, वेसे ही अंग्रेजी शासन के साथ अंग्रेजी भाषा और संस्कृति आयी। फारसी का स्थान अंग्रेजी ने ले लिया। वर्ग का विरोध होना स्वाभाविक था। इस आन्दोलन के जाने-माने नेताओं में तिलक और महात्मा गाँधी अग्रणी थे।

-अंग्रेजी संस्कृति और ईसाई धर्म इसलिए बढ़ते रहे कि अंग्रेज शासक उनके समर्थक थे, किन्तु इनका प्रबल विरोध उस वर्ग के द्वारा हुआ, जो भारत में अंग्रेजी शासन, अंग्रेजी भाषा और ईसाई धर्म का प्रसार अनुचित मानता था।

-दूसरी और अंग्रेजी संस्कृति में रंगे हुए भारतवासियों का एक ऐसा भी वर्ग रहा है, जिन्हें अपने धर्म तथा अपनी संस्कृति में दोष ही दोष दिखाई देते थे। हिन्दू धर्म की सभी बाते उन्हें पाखंड प्रतीत हुई। तीर्थो और मंदिरों के पीछे उन्हें कोई आध्यात्मिक सत्य नहीं दिखाई देता था। वे हिन्दू धर्म के अनुष्ठानों को समजने में असमर्थ थे।

ऐसे भारतीय नवयुवक तथा उनको प्रेरणा देने वाली ईसाई मिशनरियाँ सर्व साधारण समाज को विशेष प्रभावित नहीं कर सके, क्योंकि उनके हृदय में राम और कृष्ण का आदर्श स्थान था और हिन्दुओं में नवजागरण के कारण ईसाई प्रचार बहुत कुछ अवरुद्ध हो गया। परन्तु शैक्षणिक और परोपकारी कार्यो में ईसाई मिशनरियों की रुचि बराबर बढ़ती रही है। आज भी ईसाई मिशन के स्कूल, कॉलेज और अस्पताल अपने अनुशासन, उच्च मानदंड और कार्य दक्षता के लिए प्रसिद्ध हैं। उन्हींको देखते हिन्दुओं, मुसलमानों और सिक्खों ने भी जगह-जगह शिक्षा-संस्थाओं और लोककल्याण के प्रतिष्ठानों की स्थापना की। ऐसी संस्थाओं के खुल जाने से सरकार का काम बहुत हल्का हो गया, क्योंकि वास्तव में शिक्षा और स्वास्थ्य अथवा और कोई भी समाज के कल्याण के कार्य सरकार के विशेष तथा लोकतंत्रीय सरकार के कर्तव्य में गिनाये जाते हैं।

अंग्रेजी संस्कृति के अन्य प्रभाव

अंग्रेजी संस्कृति का एक प्रभाव हिन्दुओं की पारिवारिक प्रणाली पर भी पड़ा। ईसाईयों में परिवार छोटे हुआ करते थे। उनके प्रभाव से हिन्दू परिवारों मे संयुक्त परिवारों की प्रथा कम होती गई।

अंग्रेजी संस्कृति के कारण भारतीय स्त्रियों की स्थिति में भी परिवर्तन हुआ। मध्यकाल में उच्च घराने की स्त्रियों में पर्दे की प्रथा थी तथा स्त्रियों में शिक्षा का प्रचार कम था। अंग्रेजी संस्कृति के प्रभाव से भारतीय स्त्रियों में शिक्षा का प्रसार हुआ तथा पर्दे की प्रथा बंद हुई। सतीप्रथा समाप्त हो गयी, साथ ही विधवा-विवाह का प्रचार प्रारंभ हुआ। स्त्रियाँ परिवार के घेरे से निकलकर पुरुषों के साथ विभिन्न क्षेत्रों में सहयोग देने लगी। बाल-विवाह और बहु-विवाह को अनुचित माना जाने लगा।

वैदेशिक विवाह योजना का भी हिंदू समाज पर गहरा प्रभाव पड़ा है। अंतर्जातीय-विवाह और प्रेम-विवाह के प्रति विरोध कम हो चला है।

अंग्रेजी संस्कृति के प्रभाव से हिन्दू समाज में और भी अनेक परिवर्तन हुए हैं। अस्पृश्यता धीरे-धीरे कम हो रही है और खान-पान के बंधन ढीले होते जा रहे हैं। क्या खाएं और किसके साथ खाएं, यह समस्या उच्च वर्ग में वैज्ञानिक दृष्टि से देखी जाने लगी है। इसके अतिरिक्त निम्न जाति के लोगों की स्थिति में सुधार हुआ है। हिन्दू समाज पिछड़ी जातियों की उन्नति के लिए सजग हो उठा है। वेशभूषा, गृह-विन्यास आदि पर भी वैदेशिक संस्कृति का प्रभाव पड़ा है।

संदर्भ ग्रन्थ

1) आचार्य जावडेकर – आधुनिक भारत
2) G. S. Dhurye – Culture and Society
3) ચંદ્રકાંત પટેલ – અઢારમાં સૈકાનું સમાજજીવન
4) નર્મદા શંકર દવે – ધર્મ વિચાર
5) પીપી.એન. ચોપરા (સંપા) - ભારતીય ગેઝેટિયર
   (અનુ.) એચ. જી. શાસ્ત્રી
   વાય. ઈ. દીક્ષિત
6) ફાધર વાલેસ – લેખ સંચય: ૪ (ધર્મ)
7) रामजी उपाध्याय – भारतीय धर्म और संस्कृति
8) R. P. Masani – Britain in India
9) ગુણવંત શાહ – મહંત, મુલ્લા, પાદરી